**ओ३म्**

**‘सत्य के ग्रहण व असत्य के त्याग की भावना से सर्व मत-पन्थों का**

 **समन्वय ही मनुष्यों के सुखी जीवन एवं विश्व-शान्ति का आधार’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्य के व्यवहार पर ध्यान दिया जाये तो यह सत्य व असत्य का मिश्रण हुआ करता है। जो मनुष्य सत्य व असत्य को जानता भी नहीं, वह भी सत्य व असत्य दोनों का मिला जुला व्यवहार ही करता है। शिक्षित मनुष्य कुछ-कुछ सत्य से परिचित होता है अतः जहां उसे सत्य से लाभ होता है वह सत्य का प्रयोग करता है और जहां उसे असत्य से लाभ होता है तो वह, अपनी कमजोरी के कारण, असत्य का व्यवहार भी कर लेता है। मनुष्य सत्य का ही व्यवहार करे, असत्य का व्यवहार जीवन में किंचित न हो, इसके लिए मनुष्य का ज्ञानी होना आवश्यक है। ज्ञान मनुष्य को कहां से प्राप्त होता है। इसके कई साधन व उपाय हैं जिनसे इसे प्राप्त किया जा सकता है। पहला उपाय तो सत्पुरुषों व अनुभवी विद्वानों की संगति कर सत्य ज्ञान को प्राप्त किया जा सकता। संगति करने पर ज्ञानी, सत्पुरुष व अनुभवी मनुष्य अपने स्वभावानुसार अज्ञानी मनुष्यों को शिक्षा व उपदेश करते हैं जिसको स्मरण कर अभ्यास करने से मनुष्य को सत्य का ज्ञान हो जाता है। इसके साथ ही सत्य ग्रन्थों का पढ़ना भी इसमें सहायक होता है। वर्तमान आधुनिक युग की सबसे बड़ी समस्या यह है कि देश व दुनियां के लोग यह निर्धारित नहीं कर पाये हैं कि सत्य विद्याओं का ग्रहण जिसमें मनुष्यों के आचरण को भी सम्मिलित किया गया है, वह कौन कौन से ग्रन्थ हैं जो पूर्णतया सत्य हैं और कौन-कौन से ग्रन्थ हैं जिन को मनुष्य मानते हैं परन्तु उनमें सत्य व असत्य दोनों ही प्रकार के विचार, मान्यतायें, सिद्धान्त व कथन आदि विद्यमान हैं। यदि मनुष्य सत्य व असत्य का स्वरुप निर्धारण कर लेने में सफल होते और सत्य को अपने लिए पूर्ण सुरक्षित तथा असत्य को वर्तमान व भविष्य के लिए हानिकारक जान लेते और सत्य का ही आचरण करते, तो आज विश्व में सर्वत्र शान्ति व सुख का वातावरण होता। परस्पर पे्रम और सौहार्द होता, सभी दुःखियों व पीडि़तों की सेवा में अग्रसर होते और कहीं कोई विपदाग्रस्त होने के बाद शेष जीवन अज्ञान, अभाव, अन्याय व अत्याचारों से पीडि़त न होता।

 आज के युग की सबसे बड़ी आवश्यकता यही है कि संसार के सभी मत-पन्थों-सम्प्रदायों आदि के विद्वान सभी मनुष्यों के लिए एक समान आचरण करने योग्य सत्य कर्मों व कर्तव्यों का निर्धारण करें। मत-मतान्तरों की जो शिक्षायें वर्तमान में एक दूसरे के विपरीत वा विरुद्ध हैं, उन पर गहन विचार होना चाहिये और ऐसे विचारों व मान्यताओं को त्याग देना चाहिये जिससे मनुष्यों वा स्त्री-पुरुषों में किसी प्रकार की असमानता, ऊंच-नीच, भेद-भाव, रंग-वर्ण-भेद आदि उत्पन्न होता हो। मनुष्य जीवन को स्वस्थ, सुखी तथा दीर्घायु बनाने में तथा धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष की प्राप्ति कराने में ब्रह्मचर्य का पालन किया जाना आवश्यक है। पांच ज्ञान व पांच कर्म इन्द्रियों पर सभी मनुष्यों का पूर्ण संयम वा नियन्त्रण होना चाहिये, इसे ही ब्रह्मचर्य कहा जाता है। ब्रह्मचर्य में ईश्वर को जानना और उसकी प्रेरणा को ग्रहण कर उसके अनुसार ही सत्य का आचरण करना भी ब्रह्मचर्य है। ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला मनुष्य रोगी नहीं होता, स्वस्थ व सुखी होता है व उसकी आयु लम्बी होती है। अतः मत-मतान्तरों के विचारों व मान्यताओं से उपर ऊठकर सभी मत व पन्थों के मनुष्यों को ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य की अनिवार्य शिक्षा सहित हनुमान, भीष्म पितामह, भीम, महर्षि दयानन्द आदि के जीवन व आदर्शों की अनिवार्य शिक्षा भी दी जानी चाहिये और साथ हि साथ ब्रह्मचर्य का अभ्यास भी कराया जाना चाहिये। इस कारण से कि इसका पालन मनुष्य जीवन के लिए श्वांस लेने व छोड़ने के समान ही महत्वपूर्ण व उपयोगी है।

 संसार को उत्पन्न हुए लम्बा समय हो चुका है। वेद और वैदिक धर्म संसार में सबसे अधिक प्राचीन हैं। उपलब्ध प्रमाणों के अनुसार सृष्टि के आरम्भ में ही परमात्मा ने संसार के सभी मनुष्यों के पूर्वजों, आदि मनुष्यों वा ऋषियों को वेदों का ज्ञान देकर वैदिक धर्म को प्रवृत्त किया था। वेदों की उत्पत्ति और वैदिक धर्म की अवधि सम्प्रति 1 अरब 96 करोड़ 8 लाख 53 हाजर 115 वर्ष हो चुकी है। इस लम्बी अवधि में भारत में सहस्रों उच्च कोटि के ग्रन्थ लिखे गये जिनमें से अधिकांश ग्रन्थ नालन्दा व तक्षशिला आदि वृहद् पुस्तकालयों में सत्य व धर्म के विद्वेषी विधर्मी लोगों द्वारा अग्नि से जला दिये जाने के कारण नष्ट हो गये। इसके बावजूद आज भी देश-विदेश के अनेक पुस्तकालयों में सह्राधिक पाण्डुलियां हैं जिनका अध्ययन, अनुवाद व प्रकाशन किया जाना चाहिये। इससे अनेक नये तथ्य समाज के सम्मुख आ सकते हैं जिससे समाज व देश-विदेश के लोगों को लाभ हो सकता है। सौभाग्य से कुछ प्राचीन प्रमुख संस्कृत ग्रन्थ उनके हिन्दी-अंग्रेजी अनुवाद सहित सम्प्रति उपलब्ध हैं। इन ग्रन्थों में वेदों व उनके भाष्यों के अतिरिक्त 4 ब्राह्मण ग्रन्थ, 11 प्रमुख उपनिषदें, 6 दर्शन ग्रन्थ, मनुस्मृति, आयुर्वेद के ग्रन्थ, ज्योतिष के ग्रन्थ सूर्य सिद्धान्त आदि, श्रौत सूत्र, गृह्य सूत्र, वाल्मीकि रामायण, महर्षि वेदव्यास कृत महाभारत, महर्षि दयानन्द के सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थ हैं। इन ग्रन्थों व अन्य सभी धार्मिक व मत-मतान्तरों के ग्रन्थों का अध्ययन कर सत्य का निर्धारण किया जा सकता है जिससे संसार के सभी मनुष्यों को सही दिशा मिल सकती है और असत्य मान्यताओं पर आधारित परस्पर के विरोध व झगड़े दूर होकर संसार के सभी लोग सुखी हो सकते हैं। ऐसा ही एक प्रयास महर्षि दयानन्द ने अपने जीवन में किया था और उनका ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश ऐसे ही प्रयत्नों का परिणाम है। यदि संसार के लोग सभी मतों के ग्रन्थों व वैदिक साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन करेंगे तो उनको मनुष्य जीवन एवं व्यवहार-कर्तव्य-कर्म विषयक सत्य-ज्ञान अवश्य विदित हो जायेगा और ऐसा करके ही संसार के सभी मनुष्यों के जीवनों को उसके यथार्थ उद्देश्य व लक्ष्य की प्राप्ति में समर्थ बनाकर उसे क्रियात्मक रूप देने में समर्थ बनाया जा सकता है। यदि ऐसा नहीं करेंगे तो संसार में समस्यायें बढ़ती रहेंगीं, परस्पर वैमनस्य रहेगा, युद्ध आदि होते रहेंगे, निर्दोष लोग काल के गाल में समाते रहेंगे और इसके साथ वह मनुष्य जीवन के मुख्य उद्देश्य व लक्ष्य मोक्ष से दूर ही रहेंगे।

 वेद, वैदिक साहित्य और संसार के सभी मत-मतान्तरों का निष्पक्ष अध्ययन करने के बाद यही निष्कर्ष निकलता है कि मनुष्य जीवन का उद्देश्य सच्ची शिक्षा को ग्रहण कर ईश्वर, जीवात्मा, प्रकृति व मनुष्य जीवन आदि को ठीक ठीक जानना व समझना है तथा ब्रह्मचर्य से संबंधित नियमों को जानकर उनका पालन करते हुए गृहस्थ आदि आश्रमों में रहकर सद्कर्मों को करके ईश्वर के साक्षात्कार के द्वारा मोक्ष को प्राप्त करना है। हम नहीं समझते कि संसार में कोई भी मनुष्य सत्य के आचरण का विरोधी है तथापि सत्य को यथार्थ रूप से न जानने के कारण उनका व्यवहार व आचरण प्रायः सत्य के विपरीत हो जाता है। अतः विश्वस्तर पर सभी मत-मतान्तरों के ग्रन्थों के अध्ययन के साथ वेद और वैदिक साहित्य का निष्पक्ष और विवेकपूर्णक अध्ययन होना चाहिये। इस अध्ययन के परिणामस्वरुप जो उपयोगी ज्ञान व निष्कर्ष प्राप्त होते हैं, उनका प्रचार, प्रसार होने के साथ मनुष्य जीवन में उनका आचरण भी होना चाहिये। यह भी हमें जानना है कि जीवन में हमारी जितनी भी उन्नति होती है वह सत्य व्यवहार व आचरण के कारण से ही होती है। असत्य व्यवहार से भी कुछ लोग कुछ भौतिक उन्नति कर सकते हैं परन्तु वह उन्नति अस्थाई व परिणाम में अत्यन्त दुःखदायी होती है। यदि कोई व्यक्ति असत्य का आचरण कर सरकारी कानूनों से बच भी जायेगा तो जन्म-जन्मान्तर में ईश्वर के न्याय से तो उन्हें अपने कर्मों का फल भोगना ही होगा। ईश्वर के न्याय, शुभाशुभ कर्मों के सुख-दुःख रूपी फलों से बचना किसी के लिए भी सम्भव नहीं है। कर्म फल का यह आदर्श सिद्धान्त है **‘‘अवश्यमेव हि भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं।”**

 महर्षि दयानन्द ने सत्य के महत्व पर सत्यार्थप्रकाश की भूमिका में कुछ महत्वपूर्ण और उपयोगी बातें लिखी हैं। सबके लाभार्थ उन्हें प्रस्तुत कर लेख को विराम देते हैं। वह लिखते हैं कि **‘मेरा इस (सत्यार्थप्रकाश) ग्रन्थ के बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य-सत्य अर्थ का प्रकाश करना है, अर्थात् जो सत्य है, उस को सत्य और जो मिथ्या है उस को मिथ्या ही प्रतिपादन करना सत्य अर्थ का प्रकाश समझा है। वह सत्य नहीं कहाता जो सत्य के स्थान में असत्य और असत्य के स्थान में सत्य का प्रकाश किया जाये। किन्तु जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है, वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करने में प्रवृत्त होता है, इसलिये वह सत्य मत को प्राप्त नहीं हो सकता। इसीलिए विद्वान आप्तों (पूर्ण ज्ञानी व प्राणीमात्र के हितैषी) का यही मुख्य काम है कि उपदेश वा लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्यासत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात् वे स्वयं अपना हिताहित समझ कर सत्यार्थ का ग्रहण और मिथ्यार्थ का परित्याग करके सदा आनन्द में रहें।’** हमें लगता है कि संसार में सभी मनुष्यों को इस पर विचार ही नहीं करना चाहिये अपितु इसमें जो निर्विवाद बातें हैं उनको उसकी भावना के अनुरूप अपनाना भी चाहिये। महर्षि दयानन्द ने आगे भी लिखा है कि **‘मनुष्य का आत्मा सत्य व असत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है। परन्तु इस (सत्यार्थप्रकाश) ग्रन्थ में ऐसी बात नहीं रक्खी है और न किसी का मन दुखाना वा किसी की हानि पर तात्पर्य (इच्छा वा भावना) है, किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्य व असत्य को मनुष्य लोग जान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का परित्याग करें (इसी से संसार के लोगों की समग्र उन्नति सम्भव है), क्योंकि सत्योपदेश के विना अन्य कोई भी मनुष्य जाति की उन्नति का कारण नहीं है।’** आशा है कि पाठक इस लेख में व्यक्त विचारों से लाभान्वित होंगे।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**